बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 153

## रुपये का प्रबंधन

**वित्त** मंत्री निर्मला सीतारमण पिछले कुछ दिनों से निरंतर उद्योग जगत के प्रतिनिधियों से मुलाकात कर रही हैं। इससे इन अटकलों को बल मिला है कि सरकार जल्द ही आर्थिक गतिविधियों में सुधार के उपाय घोषित कर सकती है। ऐसी खबरें आई थीं कि उद्योग जगत को एक लाख करोड़ रुपये से अधिक के प्रोत्साहन पैकेज की आवश्यकता है। हालांकि किसी संभावित योजना की कोई जानकारी सार्वजनिक नहीं की गई है लेकिन यह बात ध्यान देने लायक है कि सरकार के पास ऐसा करने की राजकोषीय गुंजाइश नहीं है और उसे अतिरिक्त व्यय या कर रियायत की प्रतिबद्धता जताने से परहेज करना चाहिए। उदाहरण के लिए वाहन क्षेत्र वस्तु एवं सेवा कर में कमी की मांग कर रहा है। सरकार को ऐसा नहीं करना चाहिए क्योंकि कुछ क्षेत्रों को रियायत देने से लाभ के बजाय नुकसान ही होगा। इससे सरकार पर राजकोषीय दबाव बढ़ेगा।

इसके बजाय सरकार को वृहद चुनौतियों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। उदाहरण के लिए व्यापार और उत्पादन वृद्धि। यह सही है कि वैश्विक कारोबारी माहौल अधिक चुनौतीपूर्ण हो चुका है लेकिन जैसा कि आर्थिक समीक्षा में कहा भी गया है, वैश्विक निर्यात में देश की हिस्सेदारी अत्यधिक कम है और हमें बाजार हिस्सेदारी पर ध्यान देना चाहिए। बाहरी माहौल और अधिक कठिन हो गया है क्योंकि बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के भी प्रतिस्पर्धी अवमूल्यन की संभावना बनी है। चीन ने युआन को कमजोर होने दिया है और वह प्रति अमेरिकी डॉलर 7 के मनोवैज्ञानिक स्तर पर है। अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने मजबूत डॉलर के साथ असंतोष जताया है।

हालांकि बाजार हस्तक्षेप के माध्यम से जानबूझकर डॉलर को कमजोर करने और अमेरिकी केंद्रीय बैंक फेडरल रिजर्व द्वारा ब्याज दरों में कटौती करने (ट्रंप लंबे समय से इसकी मांग कर रहे थे) का भी अमेरिकी मुद्रा पर ऐसा ही असर होगा। हालांकि अवमूल्यन या मुद्राओं को जानबूझकर कमजोर करना एक ऐसा कदम है जो सभी देश एक साथ नहीं उठा सकते। भारत को इस माहौल में अपने हितों का संरक्षण करने की आवश्यकता है।

इतना ही नहीं, रुपया अधिमूल्यित है और यह बात देश के व्यापार संतुलन को प्रभावित कर रही है। जैसा कि अर्थशास्त्री साजिद चिनॉय ने पिछले दिनों लिखा भी था कि बीते पांच वर्ष में रुपया युआन की तुलना में वास्तविक तौर पर 18 फीसदी तक अधिमूल्यित हुआ है। चीन के साथ भारत के बढ़े व्यापार घाटे का यह भी एक कारण है। अब बढ़ते व्यापारिक तनाव के बीच युआन में और कमजोरी आ सकती है। सच तो यह है कि रुपया कई मुद्राओं की तुलना में मजबूत हुआ है। 36 मुद्राओं के निर्यात आधारित वास्तविक प्रभावित विनिमय दर सूचकांक का स्तर जून में 118.5 था। यह काफी अधिमूल्यित है। रुपये के अधिमूल्यन ने निर्यात को प्रभावित किया है और वह गत कई वर्षों से स्थिर है।

भारतीय रिजर्व बैंक की उल्लिखित नीति के मुताबिक वह रुपये के किसी खास स्तर को लेकर नहीं चलता और मुद्रा बाजार में केवल तभी हस्तक्षेप करता है जब अस्थिरता बहुत बढ़ जाती है। मौजूदा वैश्विक परिदृश्य में केंद्रीय बैंक को सरकार के साथ मशविरा करके ऐसी राह निकालनी होगी जहां रुपये का अधिमूल्यन रोका जा सके। संभव है कि विकसित देशों में शून्य के करीब की नकारात्मक ब्याज दर तथा प्रतिफल की तलाश आने वाले दिनों में और अधिक विदेशी निवेश आकर्षित करे और रुपये को और मजबूत करे। ऐसे में मुद्रा बाजार को सक्रिय प्रबंधन की जरूरत है। ज्यादा हस्तक्षेप से मुद्रा एकत्रित होगी और उसका अपना राजकोषीय प्रभाव है। परंतु मौजूदा वैश्विक हालात में देश की प्रतिस्पर्धा को बचाए रखने के लिए ऐसा करना जरूरी है। निर्यात को बढ़ाने के लिए हमें कई समस्याओं को हल करना होगा। मुद्रा अधिमूल्यन को दूर करना इस दिशा में अच्छी शुरुआत हो सकती है।

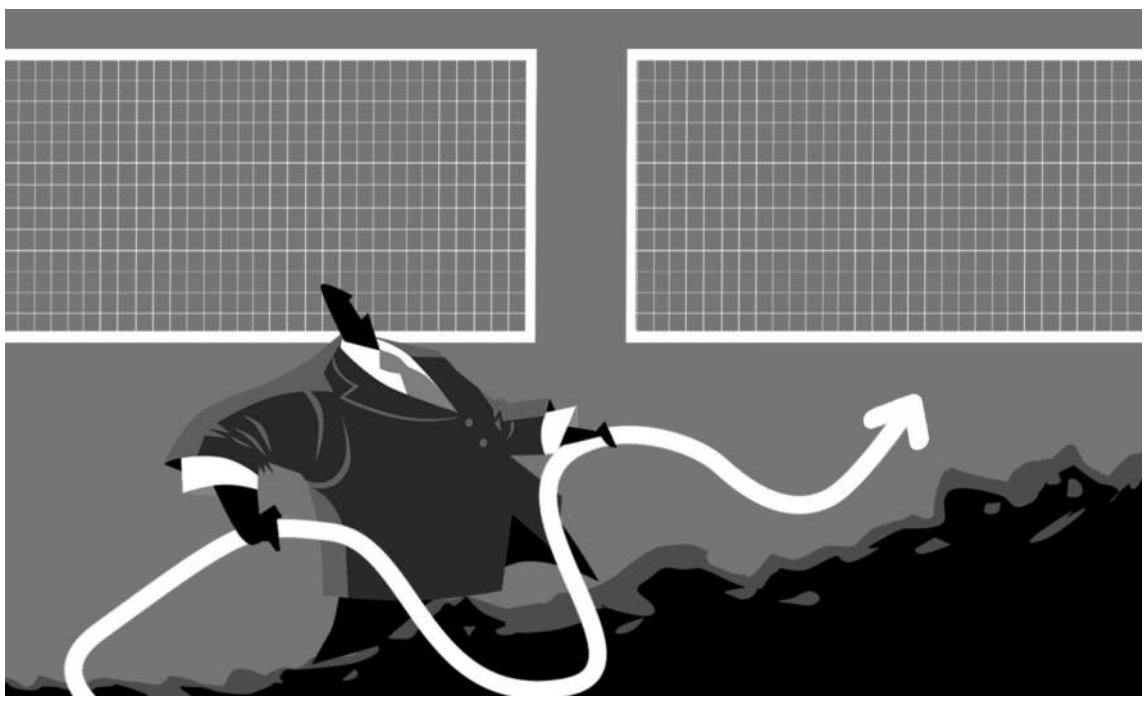

बिनय सिन्हा

# कितना तेज हो रहा भारत का विकास ?

कारोबारी आय में इजाफा नहीं हो रहा और वाहनों की बिक्री में गिरावट देखने को मिल रही है। इस परिदृश्य में जीडीपी के आधिकारिक आंकड़ों की पड़ताल कर रहे हैं **शंकर आचार्य**

करीबन साढ़े चार वर्ष पहले, अप्रैल 2015 में भी मैंने इस समाचार पत्र में लगभग उपरोक्त शीर्षक से एक आलेख लिखा था। वह लेख केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय (सीएसओ) द्वारा प्रकाशित राष्ट्रीय आय के अनुमानों और उत्पादन प्रस्तुति के लिए 2011-12 को नया आधार वर्ष बनाये जाने के बाद लिखा गया था। उस वक्त मैंने वर्ष 2014-15 की आर्थिक समीक्षा के साथ जो आशंकाएं और मुद्दे उठाए थे, वे थे:

■ जीडीपी वृद्धि दर में 2013-14 में दो फीसदी का इजाफा कर उसे 6.9 फीसदी किया गया। नीतिगत पंगुता, भुगतान संतुलन के संकट और नीतिगत ब्याज दर में 300 आधार अंक की बढ़ोतरी के बीच यह इजाफा किया गया था।

■ वर्ष 2013-14 और 2014-15 के लिए औसतन 7 फीसदी की वृद्धि दर औद्योगिक उत्पादन सूचकांक, कॉर्पोरेट आय सूचकांक, बैंक ऋण, कर राजस्व, निवेश एवं निर्यात आदि के मोर्चे पर कमजोर प्रदर्शन के बीच थी।

■ सन 2011-12 और 2012-13 के लिए विनिर्माण की हिस्सेदारी में बढ़ोतरी और थोक/खुदरा व्यापार में गिरावट तथा 2013-14 और 2014-15 में इन दोनों क्षेत्रों में सुधार की बात कही गई जबकि सूचकांक अलग रुझान दे रहे थे।

■ कंपनी खातों के क्षेत्र में नए एमसीए-21 डेटा बेस में दिक्कतें सामने आ रही थीं।

■ वर्ष 2011-12 के आधार पर पुरानी शृंखला का अभाव।

समय बीतने के साथ-साथ नया डेटा सामने आता गया। इनमें तमाम विसंगतियां भी थीं, मसलन नोटबंदी वाले वर्ष यानी 2016-17 के लिए जीडीपी वृद्धि दर के 8.2 फीसदी रहने की बात, गत वर्ष दो वैकल्पिक पुरानी शृंखला का प्रकाशन। एक राष्ट्रीय सांख्यिकी आयोग की ओर से तो दूसरी सीएसओ की ओर से। इसके अलावा नई शृंखला को लेकर तमाम टिप्पणियां देखने को मिलीं। विवाद चलता रहा और गत माह नैशनल काउंसिल ऑफ ऐप्लाइड इकनॉमिक रिसर्च (एनसीएईआर) और अमेरिकन नैशनल ब्यूरो ऑफ इकनॉमिक रिसर्च द्वारा आयोजित दो दिवसीय इंडियन पॉलिसी फोरम कॉन्फ्रेंस में यह उभरकर चरम पर आ गया। दो पूर्ण सत्र और शाम का भाषण पूरी तरह विषय केंद्रित थे। एनसीएईआर की वेबसाइट पर अरविंद सुब्रमण्यन, सुदीप्त मंडल, एन आर भानुमूर्ति, आर नागराज, प्रणव वर्धन और सेबेस्टियन मॉरिस जैसे विद्वानों की बात पढ़ी जा सकती है। 2011-12 की शृंखला तथा उसके स्रोत और तरीकों पर उठाए गए अधिकांश सवाल जायज हैं। खासतौर पर 2014-2018 के बीच सरकार के मुख्य आथिक सलाहकार रहे अरविंद सुबमण्यन का पर्चा विशिष्ट है।

सुब्रमण्यन अपने पर्चे में देश के वृद्धि प्रदर्शन को (2011-12 की आधिकारिक आधार शृंखला के मुताबिक) दो अवधियों में बांटते हैं: 2011 के पूर्व यानी 2002-03 से 2010-11 तक और दूसरा 2011 के बाद यानी 2012-13 से 2016-17 तक के बीच। उन्होंने 2011-12 को कट ऑफ वर्ष बनाया है क्योंकि यही वह समय है जब नए आधार की शुरुआत हुई थी।

2011-12 को कट ऑफ वर्ष इसलिए बनाया गया है क्योंकि नया आधार उसी वर्ष आरंभ हुआ था। इसके बाद उन्होंने उत्पादन वृद्धि के रुझानों की तुलना पर ध्यान केंद्रित किया। इसके अलावा समेकित मांग के विभिन्न चरों की वृद्धि, खासतौर पर निवेश, निर्यात और ऋण पर ध्यान दिया गया। आयात का भी जिक्र हुआ लेकिन इस पर उतना जोर नहीं दिया गया।

वर्ष 2011 के पहले और बाद में इन चरों की तुलना की गई तो पता चला कि 2011 के पहले तेजी का दौर था और उस वक्त जीडीपी करीब 8 फीसदी की दर से बढ़ रही थी। उस समय वास्तविक निवेश 13 फीसदी, वास्तविक निर्यात 15 फीसदी और वास्तविक ऋण 17 फीसदी की दर से बढ़ रहे थे। उसके बाद नकारात्मक झटकों का दौर आया। वर्ष 2011 के बाद वैश्विक व्यापार में ठहराव आ गया। वर्ष 2012-14 के दौरान संप्रग सरकार की नीतिगत पंगुता और 2013 के भुगतान संतुलन के बीच दोहरी बैलेंस शीट का संकट उभरा। रही सही कसर 2014-15 के सूखे और 2016 में नोटबंदी ने पूरी कर दी। 2014 के बाद तेल कीमतों में गिरावट से जो लाभ मिलना था, वह इन वजहों से पूरी तरह मिल नहीं सका। अनुमान के मुताबिक ही 2011 के बाद से वृहद मांग के संकेतकों में गिरावट आने लगी। निवेश, निर्यात और ऋण आदि सभी क्षेत्र गिरकर 3 फीसदी के स्तर पर आ गए जबकि 2011 के पहले यह दो अंक में थी। शायद सोचा गया होगा कि 2011 के बाद जीडीपी वृद्धि दर में भी तेज गिरावट आई होगी लेकिन ऐसा नहीं हुआ। अरविंद सुब्रमण्यन की मुख्य पहेली यही है कि जीडीपी वृद्धि दर में केवल 0.8 फीसदी की गिरावट आई और यह 7.7 फीसदी से गिरकर 6.9 फीसदी हुई।

सुब्रमण्यन का यह कहना एकदम सही है कि 2011 के बाद से जीडीपी वृद्धि के आंकड़ों में गड़बड़ी है। गौरतलब है कि इनका आकलन 2011-12 की नई शृंखला के आधार पर किया गया है। वह कहते हैं कि 2011 के बाद 7 फीसदी की वृद्धि दर हासिल करने वाले किसी भी देश ने इतनी लंबी अवधि तक निवेश, निर्यात और ऋण के क्षेत्र में इतना कमजोर प्रदर्शन नहीं किया। वह अंतरराष्ट्रीय अनुभवों का सहारा लेकर कहते हैं कि जब भी वृहद मांग के ये कारक मंद रहे हैं, किसी भी देश ने 5.5 फीसदी से अधिक की वृद्धि दर्ज नहीं की है। केवल चार देशों ने 4.5 से 5.5 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की, 13 देशों ने 3.5 से 4.5 प्रतिशत और 33 देशों ने 3.5 प्रतिशत से कम की वृद्धि दर हासिल की।

उनके तथा अन्य लोगों द्वारा प्रस्तुत पर्चों में ढेर सारी और बातें हैं। सभी वर्ष 2011 के बाद जीडीपी आंकड़ों को लेकर गंभीर चिंता जताते हैं और राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय द्वारा जताए गए राष्ट्रीय आय के अनुमान का नए सिरे से आकलन करने की मांग करता है। वर्ष 2011 के बाद के दौर में जीडीपी अनुमानों में सुधार के लिए कंपनियों के एमसीए-21 डेटा बेस तथा चालू जीडीपी व्यवस्था में इस्तेमाल मूल्य अपस्फीतिकारक चयन उत्तरदायी हैं।

सवाल यह है कि अर्थव्यवस्था कितनी तेज गति से प्रगति कर रही है ? स्पष्ट है कि यह दर आधिकारिक तौर पर दर्शाए गए आंकड़ों से काफी कम है। कितनी कम ? इस बारे में सुब्रमण्यन के दो हालिया पर्चों के बाद अनुमान लगाया जा सकता है। उनके मुताबिक अगर आधिकारिक आंकड़े 7 फीसदी की दर दर्शा रहे हैं तो यह आंकड़ा 2.5 फीसदी कम यानी तकरीबन 4.5 फीसदी या उससे कम होना चाहिए। मेरा अपना अनुमान है कि यह गिरावट इतनी अधिक नहीं बल्कि एक से दो फीसदी के बीच होगी। यानी ताजा आंकड़े अगर 5.8 फीसदी की दर दर्शा रहे हैं तो वास्तविक वृद्धि दर 4 से 5 फीसदी के बीच होनी चाहिए। यह आंकड़ा बहुत प्रीतिकर नहीं है और वाहन बिक्री में आई 30 फीसदी की गिरावट जैसे मानकों को तवज्जो दें तो गिरावट और बढ़ सकती है।

# वस्तु एवं सेवा शुल्क का प्रदर्शन और इससे जुड़े कुछ प्रश्न

नीति नियम

मिहिर शर्मा

**आज** देश की अर्थव्यवस्था जिस भारी संकट से गुजर रही है, उसके मूल में मौजूदा सरकार की जो नाकामियां हैं, उनमें से प्रमुख है वस्तु एवं सेवा कर यानी जीएसटी को समुचित ढंग से तैयार करने और क्रियान्वित करने में नाकामी। जीएसटी को एकल कर दर होना था जिससे करदाताओं का बोझ काफी कम होता, कागजी कार्रवाई कम होती, अनुपालन की लागत में गिरावट आती, इलेक्ट्रॉनिक ट्रैकिंग आसान होती और अनुपालन बढ़ता। इसके साथ ही कर दायरे में इजाफा होता और पहले बाहर रहे उत्पादों पर कर लगने से सरकार का राजस्व बढ़ता। इसके कारण पूरी कर व्यवस्था में जो किफायत आती वह सकल घरेलू उत्पाद में इजाफा करने के साथ-साथ आर्थिक वृद्धि और जीवन स्तर सुधारने में सहायक होती।

हम आज कहां हैं ? सबसे पहली बात, जीएसटी राजस्व के मोर्चे पर अपेक्षा के अनुरूप नहीं रहा। गत वित्त वर्ष में कुल राजस्व सकल घरेलू उत्पाद के एक फीसदी तक कम रहा। हालांकि केंद्रीय बजट में इस तथ्य को जनता से छिपाने का प्रयास किया गया। यह कमी पूरी तरह जीएसटी के कारण रही जो गत वर्ष के बजट अनुमान से कम संग्रह कर सका। ऐसा क्यों हुआ ? एक वजह तो यह हो सकती है कि शायद कर वंचना अनुमान से अधिक रही। ऐसा इसलिए क्योंकि जीएसटी काफी हद तक इनवॉइस मिलान पर निर्भर रहा। परंतु ऐसे मिलान के लिए ऑनलाइन प्लेटफॉर्म सही तरीके से बनाया ही नहीं गया था। जीएसटी अपने आप में अत्यंत जटिल है और इसके चलते इनवॉइस मिलान का काम उचित तरीके से नहीं हो सका। इससे फर्जी इनवॉइस सामने आने लगे। परिणामस्वरूप भुगतान सुगम होने और चतुराईपूर्ण तकनीकी निस्तारण के जरिये अनुपालन में सुधार से इतर सरकार अब इस बात पर नजर रख रही है कि कर अधिकारियों को ज्यादा अधिकार कैसे दिए जाएं। यह जीएसटी की मूल भावना के प्रतिकूल है।

एक अन्य समस्या कर दरों की है जो बहुत ज्यादा हैं या बेहद कम हैं। हमें यह समझना होगा कि राजस्व निरपेक्ष कर दर आखिर क्या हो सकती है। अगर यह 18 फीसदी है और शराब और ईंधन इसमें शामिल हैं तो हमें यह दर बरकरार रखनी होगी। अगर हमें अधिकांश वस्तुओं और सेवाओं को कम कर दर के दायरे में रखना है और यदि जीएसटी परिषद अपना पूरा समय दरों में बदलाव या कमी करने में लगा देती है तो स्वाभाविक है कि हम राजस्व लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाएंगे। अगर हमें कम कर दर वाला देश बने रहना है तो यह ठीक है लेकिन तब हमें यह मानना होगा कि हम जीएसटी क्रियान्वयन से राजस्व निरपेक्षता नहीं हासिल कर रहे हैं। ऐसे में हमें व्यय में कटौती करनी होगी। परंतु उस स्थिति में हमें अपना रुझान बदलना होगा और कुछ कड़े फैसले लेने होंगे।

उदाहरण के लिए यह मानना होगा कि बीते दशक में व्यय में सबसे अधिक इजाफों में से एक अर्द्धसैनिक बलों में हुआ। रक्षा पर आगे होने वाले व्यय में स्थायी रूप से इजाफा हो सकता है। व्यवहार में ऐसा बदलाव सरकारी व्यय को तयशुदा सीमा में रखने के लिए आवश्यक हो सकता है। हम उतना व्यय नहीं कर सकते न ही कर लगा सकते हैं। ऐसे में हमारे पास उक्त काम करने का कोई स्थायित्व भरा तरीका नहीं है।

समस्या यह है कि अगर हम अनुमान से कम जीएसटी संग्रह करते हैं और सरकार का यह कहना सही है कि दरों में कटौती आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए की गई है तो वह बढ़ोतरी कहां है ? कारोबारियों में उत्साह की भावना क्यों नहीं नजर आ रही है ? अगर लोगों के पास इतनी अधिक धनराशि है तो खपत में इजाफा क्यों नहीं आ रहा है और निवेश बढ़ता हुआ क्यों नहीं दिख रहा ?

एक दिक्कत यह हो सकती है कि जीएसटी की निवेश अनुकूलता का लक्ष्य भी हासिल नहीं हुआ है। कारोबारी समूहों के जीएसटी चुकाने को लेकर कई तरह के सुधार किए गए हैं और अन्य सुधार प्रक्रियाधीन हैं। यह कहा जा सकता है कि देश में अभी भी निवेश की दृष्टि से बहुत अनुकूल माहौल नहीं है। दरों में बार-बार बदलाव हो रहा है। न केवल जीएसटी दर बल्कि सीमा शुल्क दरों पर भी यही बात लागू होती है। कर आतंक एक हकीकत है। कर निरीक्षकों को जीएसटी लागू होने के बाद बहुत अधिक अधिकार दे दिए गए हैं। इन सारी वजहों से निवेश सामान्य स्तर से भी नीचे चला गया। जीएसटी के कारण आर्थिक गतिविधियों में इजाफा होने का अनुमान इस बात पर निर्भर था कि कर व्यवस्था कम आक्रामक हो। हालांकि कर भुगतान व्यवस्था में सुधार की योजना है वहीं इसे लेकर कहीं अधिक इच्छाशक्ति से काम करने की जरूरत है। अधिकांश करदाताओं के लिए जीएसटी फॉर्म स्वत: तैयार होने चाहिए और उन्हें तीसरे पक्ष की इनवॉइस और बिल निस्तारण ऐप के माध्यम से जमा करने की व्यवस्था होनी चाहिए, जिन्हें मोबाइल से संचालित किया जा सके। अगर इनवॉइस मिलान का काम नहीं हो पाता तब हमें दूसरी दिशा में प्रयास करते हुए अनुपालन को आसान बनाना होगा। इसके लिए श्रम की बचत वाले तकनीकी नवाचार करने होंगे। वित्त मंत्रालय को निजी क्षेत्र के वित्तीय प्रौद्योगिकी उद्योग के लोगों को साथ लेकर इसे अंजाम देना चाहिए। कर भुगतान सुगम बनाने को लेकर सार्वजनिक मशविरा भी किया जाना चाहिए।

सरकार निरंतर यह दावा कर रही है कि वह बुनियादी वस्तुओं पर अधिक कर दर नहीं रख सकती लेकिन जीएसटी के पीछे की अवधारणा यही कहती है कि गरीबों की क्षतिपूर्ति का सबसे बेहतर और किफायती तरीका अप्रत्यक्ष करों के साथ छेड़छाड़ करना नहीं बल्कि प्रत्यक्ष सब्सिडी में बदलाव है। सरकार उसका तरीका पहले ही निकाल चुकी है और सब्सिडी देने में अपनी सक्षमता पर उसे गर्व भी है।

ऐसे में सरकार को विविध दरों का बचाव त्याग देना चाहिए और किफायत और उन लाभों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए जो उसे देश के गरीबों की सब्सिडी जारी रखने के संसाधन देंगे। आज सरकार के पास न तो सब्सिडी के लिए पैसा है और न ही अर्थव्यवस्था में गति है।

## कानाफूसी

### धन देने में देरी

गत वर्ष दिसंबर में सत्ता में आने के बाद मध्य प्रदेश सरकार लगातार केंद्र सरकार पर यह आरोप लगाती रही है कि वह केंद्र की विभिन्न योजनाओं में उसका हिस्सा जारी करने में जानबूझकर लापरवाही बरत रही है। जिन योजनाओं का भुगतान नहीं किया जा रहा है उनमें महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना भी शामिल है। मौजूदा वित्त वर्ष के आरंभ में राज्य को केंद्र से इस योजना के लिए 700 करोड़ रुपये की राशि मिलनी बाकी थी। राज्य सरकार ने कहा कि इस फंड के न मिलने से राज्य की ग्रामीण आबादी को दिक्कत का सामना करना पड़ रहा है। प्रदेश के ग्रामीण विकास मंत्री राशि हासिल करने के लिए दूसरी बार दिल्ली का दौरा करने की योजना बना रहे हैं। अपनी पिछली यात्रा के दौरान उन्हें केवल आश्वासन मिला था। वह आशा कर रहे हैं कि इस बार शायद कुछ ठोस कदम उठाया जाएगा।

### नई पीढ़ी का संकट

जेल की सजा काट रहे राष्ट्रीय जनता दल अध्यक्ष लालू प्रसाद के बेटे तेजस्वी यादव और तेज प्रताप यादव बहुत गलत समय पर अपने गृह राज्य बिहार की राजनीति से दूर हैं। गत 10 अगस्त को पार्टी ने पटना में सदस्यता अभियान शुरू किया लेकिन इस अवसर पर न तो दोनों भाई मौजूद थे और न ही उनकी बहन मीसा भारती। ऐसे में कार्यक्रम को अपेक्षित सफलता मिलनी ही नहीं थी। कार्यक्रम स्थल पर बमुश्किल 200 कुर्सियां थीं, और पार्टी कार्यकर्ता उन्हें भी भरने के लिए संघर्ष करते नजर आए। तेज प्रताप झारखंड के देवघर में सावन महीने की पूजा अर्चना में व्यस्त थे, जबकि तेजस्वी अपने और अपने पिता के किसी अदालती मामले के चक्कर में दिल्ली गए थे। यादव परिवार की दूसरी पीढ़ी के इस आचरण पर पार्टी के नेता नाराज नजर आए।

## आपका पक्ष

### कम बुआई से खाद्य संकट की आशंका

इस साल खरीफ सीजन की मुख्य फसल धान की बुआई काफी कम हुई है। मॉनसून के देर से आने, बारिश की कमी तथा कुछ राज्यों में बाढ़ के कारण फसलों की बुआई काफी कम हुई है। इससे देश में खाद्य संकट या अनाज महंगे हो सकते हैं। खरीफ सीजन की फसल बाजार में करीब चार माह में आ जाएगी। आम तौर पर खरीफ सीजन की फसल तीन से चार महीने में तैयार हो जाती है। इसके बाद यह बाजार में आएगी तथा कम फसल होने से महंगाई बढ़ सकती है। कृषि मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार देश में 265 लाख हेक्टेयर में धान की रोपाई हुई है जो औसत से 40 लाख हेक्टेयर कम है। इसके अलावा महाराष्ट्र, कर्नाटक, बिहार सहित देश के कई राज्यों में बाढ़ के कारण भी फसल खराब होने की आशंका जताई गई है। इससे आने वाले समय में फसल उत्पादन कम होगा। बाजार में कम फसल

आने से इसके दाम बढ़ जाएंगे जिससे महंगाई बढ़ सकती है। कई राज्यों में चावल मुख्य भोजन है और इसकी खपत अधिक होती है। पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखंड, ओडिशा, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में लोग भोजन में चावल अधिक पसंद करते हैं। इन राज्यों में चावल की खपत अधिक होती है। ऐसे में फसल की रोपाई कम होने से उत्पादन घटेगा जिससे मांग बढ़ने के कारण महंगाई बढ़ेगी। बारिश की कमी के कारण खरीफ सीजन की अन्य फसलों की बुआई पर भी असर पड़ा होगा। बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में सब्जियों का उत्पादन भी प्रभावित हुआ होगा। ऐसे में अनाज के साथ सब्जियों के भी दाम बढ़ सकते हैं। अत: सरकार को इस स्थिति पर अभी से नजर रखनी चाहिए तथा खाद्य संकट या महंगाई बढ़ने से रोकने के लिए अभी से पहल शुरू कर देनी चाहिए।

**इस साल खरीफ सीजन में धान की बुआई औसत से 40 लाख हेक्टेयर कम हुई है**

*दीप्ति कुमारी, नई दिल्ली*

### स्वास्थ्य क्षेत्र में किए जाएं प्रभावी बदलाव

भारत में स्वास्थ्य पर जीडीपी का बहुत कम हिस्सा खर्च किया जाता है जो गरीबों और जरूरतमंद लोगों की जरूरतों को पूरा करने के लिहाज से काफी दूर है। सार्वजनिक स्वास्थ्य बजट का बड़ा हिस्सा परिवार कल्याण पर खर्च होता है। देश के लगभग सभी सरकारी अस्पतालों में रोगियों की हालत दयनीय है। संक्रामक रोगों से ग्रस्त मरीज भी अस्पताल के बाहर खुले और गंदे में रहने को मजबूर हैं। भारत में स्वास्थ्य पर निजी खर्च 78 प्रतिशत के लगभग है। इसका अर्थ यह हुआ कि मात्र 22 फीसदी चिकित्सा व्यय ही सरकार के खाते में आता है। हमारे यहां स्वास्थ्य पर लोगों का निजी खर्च दुनिया भर में सबसे अधिक है। निरोधात्मक चिकित्सा तथा प्राथमिक चिकित्सा को बिल्कुल मुफ्त तथा नकदी रहित करना होगा, जबकि अनुपूरक चिकित्सा को आंशिक रूप से शुल्क आधारित बनाया जा सकता है। सरकार को यह जिम्मेदारी लेनी होगी और इसके लिए खर्च की व्यवस्था कर ढांचे से ही करनी होगी। महंगी स्वास्थ्य सेवाओं से निजात पाने में स्वास्थ्य बीमा से ज्यादा सुलभ और नि:शुल्क या सस्ती चिकित्सा सुविधाएं लोगों के लिए मददगार हो सकती हैं।

*अजीत कुमार गौतम, गोरखपुर*

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।